गाथा GAATHA ISSN : 3049-3463 (Online)

गोदान में नारी जीवन की त्रासदी

✍ कंचन कुमारी
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
एस.आर.के.जी. महाविद्यालय, सीतामढ़ी

आधुनिक साहित्य ने कई विषयों को अपना आश्रय दिया है। आधुनिकता की होड़ में स्त्री के व्यक्तित्व को पहचान दिलाने की कोशिश में कई लेखकों ने अपनी रचनाएं समाज को समर्पित की है। समाज की स्थितियों से लोगों को अवगत कराना लेखक की प्राथमिकता होनी चाहिए। इन्हीं रचनाओं को पढ़कर ही पाठकों को समाज का ज्ञान होता है। हर लेखक अपनी पूरी कोशिश करता है कि वह समाज को सही जानकारी उपलब्ध कराये। 21वीं सदी में नारी विमर्श एक ऐसा विषय बन गया है कि हर लेखक इसकी चर्चा अपनी रचना के माध्यम से करने को उत्सुक है। 1936 ई० में प्रकाशित प्रमुख साहित्यकार प्रेमचंद के द्वारा लिखा उपन्यास "गोदान" एक साथ कई स्त्रियों के व्यक्तित्व को दर्शाने में सफल रहा है। "गोदान" के संघर्षशील स्त्री चरित्रों की गाथा को मिलाकर प्रेमचंद ने गोदान का महाकाव्यात्मक कथानक बुना है।

इस उपन्यास में "धनिया" का चरित्र एक गांव की महिला का प्रतिनिधित्व करता है। यह कहानी सिर्फ धनिया की ही नहीं है बल्कि उन सभी महिलाओं की है जो शादी के बाद अपना पूरा जीवन पति एवं बच्चों को देखभाल में लगा देती है। इस काम में वह इतनी मग्न हो जाती है कि अपने शरीर का भी ख्याल वह नहीं रख पाती है। "उसकी भी उम्र अभी क्या थी छात्तिस्वां ही साल तो था; पर सारे बाल पक गये, चेहरे पर झुर्रियां पड़ गई थी। सारी देह ढल गई थी, वह सुंदर गेहूंआं रंग सांवला गया था और आंखों से भी कम सूझने लगा था पेट की चिंता ही के कारण तो कभी जीवन का सुख ना मिला।" गांव में रहने वाली हर स्त्री का यही हाल होता है। सामाजिक परंपराओं ने स्त्री के जीवन को पुरुष के जीवन से इस तरह बांधा है कि खुद के लिए कुछ करना ही स्त्रियां नहीं जानती हैं। ग्रामीण स्त्रियों का समय कब खत्म हो जाता है पता ही नहीं चलता। प्रातः काल से उठकर वे जो भी श्रम करती हैं उसका संबंध परिवार और बच्चों से होता है। स्वंय के शरीर के लिए सिर्फ भोजन और कपड़ा ही उनकी मूल आवश्यकता बन जाती है। इस उपन्यास का धनिया चरित्र उन सभी ग्रामीण महिलाओं का प्रतिनिधित्व करता है जो अपना सारा जीवन कठोर श्रम में गुजारती है। एक किसान की पत्नी के जीवन का संघर्ष इस चरित्र के माध्यम से दर्शाया गया है। प्रेमचंद 'गोदान' में अपने समय की स्त्री छवि को कई कोणों से देखते हैं। अगला उदाहरण उन्होंने विधवा स्त्री का दिया है जिसका नाम झुनिया है। इसके माध्यम से वे स्त्रियों की लाचारी को व्यक्त करते हैं। स्त्री का विवश जीवन और उस पर विधवा होकर अकेला जीवन जीने की लाचारी को झुनिया के माध्यम से व्यक्त करते हैं। हमारा समाज इतनी रूढ़िवादिताओं से जकड़ा हुआ है कि इसके कारण विधवाओं का जीवन किसी अभिशाप से कम नहीं जान पड़ता है। सभी जानते हैं की जन्म और मृत्यु ईश्वर

ISSN : 3049-3463 (Online)

के हाथ में है। फिर किसी और के मृत्यु से किसी दूसरे मनुष्य का जीवन इतना भी प्रभावित न कर दिया जाए कि उसका जिंदा रहना भी मुश्किल हो जाए। पति की मृत्यु के बाद एक स्त्री को यह अधिकार नहीं कि वह अपना जीवन अपने तरीके से जी सके। क्या जो मर गया उसके पीछे जो जिंदा है उससे भी मार दिया जाए? इन परंपराओं के कारण कोई विधवा स्त्री चाह कर भी किसी दूसरे पति का वरन नहीं कर पाती है। झुनिया की मनोदशा कुछ ऐसी ही है। "वह विधवा है। उसके नारीत्व के द्वार पर पहले उसका पति रक्षक बना बैठा रहता था। वह निश्चित थी। अब उस द्वार पर कोई रक्षक ना था, इसलिए वह उस द्वारा को सदैव बंद रखती है। कभी–कभी घर के सूनेपन से उकताकर वह द्वार खोलती है; पर किसी को आते देखकर भयभीत होकर दोनों पट भेड़ लेती है।" विधवा की व्यथा अभी यहीं समाप्त नहीं होती है। यदि कोई पुरुष उसे अपना भी ले तो उसे परिवार और समाज स्वीकार नहीं करता है। इसी डर से झुनिया को अपना लेने के बाद गोबर उसके साथ अपने घर में प्रवेश नहीं करता और बिना उसे बताएं घर के दरवाजे से ही शहर भाग जाता है। समाज का दर सिर्फ उस स्त्री को ही नहीं बल्कि विधवा को अपनाने वाले के अंदर भी इतना है कि उसका सामना सीधे तौर पर ना करके परोक्ष रूप से करता है। नारी के प्रति समाज में जहां सम्मान का दिखावा किया जाता है की नारी देवी है उसके बिना संसार की कल्पना भी नहीं की जा सकती, नारी जननी है, नारी धरती है और भी न जाने कितनी बातें जो समाज को भ्रमित करती है। फिर कोई स्त्री इतनी बेबस क्यों हो जाती है कि जीना तो दूर जिंदा रहना भी मुश्किल हो जाता है। इस अवस्था में झुनिया का जीवन और भी कष्टकारक हो जाता है। "वह आफत की मारी, व्यंग बाणों से आहत और जीवन के आघातों से व्यथित किसी वृक्ष की छांह खोजती फिरती थी, और उसे एक भवन मिल गया था, जिसके आश्रय में वह अपने को सुरक्षित और सुखी समझ रही थी; पर आज वह भवन अपना सारा सुख–विलास लिए अलादीन के राजमहल की भांति गायब हो गया था और भविष्य एक विकराल दानव के समान उसे निगल जाने को खड़ा था।" "झुनिया प्रेम वंचित और रिश्तों के धरातल पर रिक्त औरत है। उसने अपनी यह नियति स्वयं नहीं चुनी, समाज ने शाप की तरह उस पर इसे थोप है। प्रेमचंद ने मानवीय मनोविज्ञान पर अपनी पकड़ दिखाते हुए यह स्पष्ट किया है कि झुनिया अभी किशोरावस्था में कदम रखने वाली ऐसी औरत है जिसके जीवन को लेकर कुछ स्वाभाविक सपने हैं। एक स्त्री की सहज शारीरिक जरूरत को पूरा करने की इच्छा उसके मन में भी मौजूद है। इससे औरत अपराधी नहीं हो जाती। अपराधी वह रूहि–जर्जर समाज है, जो औरत को ऐसे कदम उठाने के लिए मजबूर करता है।" यहां एक बाल विधवा झुनिया के बहाने औरत की लाचारी को व्यक्त किया गया है।

ग्रामीण जीवन में स्त्रियों का जीवन श्रम युक्त और कष्ट युक्त होते हुए शोषण युक्त भी होता है। पुरुष चाहे जिस भी जाति का हो उसका दिल अगर कोई स्त्री पर आ जाए तो उसके लिए सामाजिक बंधन और नियम कानून का कोई मूल्य नहीं रह जाता है। यह सारी स्थितियां सिर्फ स्त्रियों के लिए ही मान्य है। पुरुष के लिए तो सिर्फ स्त्री होना ही पर्याप्त है चाहे वह स्त्री नाबालिग हो, विधवा हो, विवाहित हो, विजातीय हो या उम्र का अंतर ही क्यों ना हो। उसे प्राप्त करने की चाह पुरुष से हर कार्य करवा लेती है फिर भी समाज उसे माफ कर स्वीकार कर लेता है। परंतु किसी स्त्री की ऐसी इच्छा किसी अपराध से

 ISSN : 3049-3463 (Online)

कम नहीं होती और आश्चर्य की बात तो यह है कि इस अपराध की सजा देने वाले इसी पुरुष समाज के लोग होते हैं। कुछ ऐसा ही उदाहरण इस उपन्यास में सिलिया के माध्यम से दर्शाया गया है। मातादीन अपनी इच्छा से सिलिया के साथ बिना किसी नियम, किसी रिश्ते के साथ रहने को राजी है परंतु उसके साथ अपने घर में नहीं रह सकता है। यदि वह उस स्त्री को अपनाता है तो उसका उसके घर में कोई जगह नहीं लेकिन वहीं पुरुष बिना उसके अपने घर में अपनाया जाता है। विडंबना तो यह है कि इस स्थिति का दोष भी इसी स्त्री (सिलिया) को दिया जाता है। जिसका शोषण पुरुष वर्ग के द्वारा होता है। आज के समय में भी यह दृश्य देखने को मिलता है। इसका स्पष्ट उदाहरण इस कथन से दृष्टिगत है "मातादिन चुपके से सरक गया था। सिलिया का तन और मन दोनों लेकर भी बदले में कुछ ना देना चाहता था। सिलिया अब उसकी निगाह में केवल काम करने की मशीन थी और कुछ नहीं। उसकी ममता को वह बड़े कौशल से नाचता रहता था। आश्चर्य तब और बढ़ जाता है जब स्त्री का शोषण कर उसे अकेला मरने के लिए छोड़ दिया जाता है। इस स्थिति में दो तरह की सच सामने आती है कि क्या अब पुरुष को उस स्त्री की आवश्यकता नहीं रही और क्या स्त्री उसके आवश्यकता की वस्तु थी जिसे उपयोग में लाकर छोड़ दिया जाए? दूसरा की क्या पुरुष ऐसा समाज के डर से करता है जिसमें वह चाहकर भी उस स्त्री को अपना नहीं पा रहा है। "सिलिया ने उस पक्षी की भांति, जिसे मालिक ने पर काटकर पिंजरे से निकाल दिया हो मातादीन की ओर देखा। उस चितवन में वेदना अधिक थी या भर्त्सना, यह कहना कठिन है। पर उसी पक्षी की भांति उसका मन फड़फड़ा रहा था और ऊंची डाल पर उन्मुक्त वायुमंडल में उड़ने की शक्ति न पाकर उसी पिंजरे में जा बैठना चाहता था, चाहे उसे बेदाना, बेपानी, पिंजरे की तीलियों से सर टकराकर मर ही क्यों न जाना पड़े। सिलिया सोच रही थी, अब उसके लिए दूसरा कौन सा ठौर है?" अब इसकी स्थिति ऐसी है कि उसका जिंदा रहना भी मुश्किल है। पुरुष के प्रेम में उसने अपने माता–पिता के घर से भी ना था तोड़ लिया है। जिस कारण उसे पिता के घर में भी आश्रय नहीं मिल पाता और वह ठोकर खाने को विवश हो जाती है।

प्रेमचंद यहां स्त्री जीवन के निर्मम यथार्थ को व्यक्त करते हैं। हालांकि इस उपन्यास में सिलिया की जीत हो जाती है। अंततः मातादिन सारे रूढ़िवादिताओं को तोड़ते हुए सिलिया का साथ देता है। जहां प्रेमचंद ने स्त्री को लेकर एक पवित्रतावादी रवैया को दर्शाया है।

'गोदान' में कई तरह के समाज हैं। प्रेमचंद ने उसे समय के समाज में विभिन्न नारी चरित्त्रयों को देखने की जो शैली अपनाई है वह आलोचनात्मक है। स्त्री का समाज के नजर में आदर्श रूप भी दृष्टव्य है। समाज वैसी ही स्त्रियों को आदर्श चरित्र मानता है जो अपना सारा जीवन पति और उसके बच्चों के देखभाल में गुजराती रहे और पति की इच्छा से ही सारा काम करें। इस उपन्यास में 'गोविंदी' का चरित्र कुछ ऐसा ही दर्शाया गया है। परंतु जिस पुरुष की वह पत्नी है उसे उसमें कोई गुण नजर नहीं आता और वह किसी अन्य महिला को प्राप्त करने की इच्छा सदैव रखता है। बाहरी लोगों को गोविंद दी एक देवी के रूप में नजर आती है और सबको उसका जीवन सुख में एवं आनंदित लगता है। परंतु वास्तविकता तो

 ISSN : 3049-3463 (Online)

कुछ और ही है। वह अपने पति के रवैया से इतनी दुखी है कि उसे अपने ही घर में घुटन होती है। "मुझे अब अपना जीवन असह्य हो गया है। मुझसे अब तक जितनी तपस्या हो सकी मैंने की; लेकिन अब नहीं सहा जाता।" वह अपने पति के बर्ताव से बहुत निराश हो चुकी है। निराशा इस हद तक बढ़ जाती है कि वह घर छोड़ने का निश्चय कर लेती है। "आज से यह इरादा करके चली थी कि फिर लौट कर न आऊंगी। मैंने बड़ा जोर मारा की मोह के सारे बंधनों को तोड़कर फेंक दूं लेकिन औरत का हृदय बड़ा दुर्बल है मेहता जी! मोह उसका प्राण है। जीवन रहते हैं मोह तोड़ना उसके लिए असंभव है।" यह उपन्यास बताता है कि आखिर तक भी आदर्शवाद के दबाव प्रेमचंद के ऊपर इतने अधिक थे कि वह प्रेम को भी स्त्री की स्वच्छंदता से जोड़ते हैं। स्त्री भी गुलामी की जंजीरों को काटने के लिए छटपटा रही थी। यह सरासर स्वतंत्रता और स्वाधीनता का मामला था। प्रेमचंद डॉक्टर मेहता के माध्यम से यह बताते हैं कि स्त्री–पुरुष के संबंध बनाए रखने में इस्त्री की भूमिका ज्यादा महत्वपूर्ण है जहां सेवा का अभाव है वही विवाह–विच्छेद है, परित्याग है, अविश्वास है और आपके ऊपर पुरुष जीवन की नौका की कर्णधार होने के कारण जिम्मेवारी ज्यादा है। इस प्रकार इस उपन्यास में स्त्री को ही आदर्श बताकर सारी जिम्मेवारी स्त्री पर डाल देने की कवायत की गई है। क्या परिवार सिर्फ औरत का होता है? आखिर क्यों सिर्फ औरत ही अपनी इच्छाओं का दामन करें? पुरुष के प्रति समर्पण और उसकी हर पक्ष में साथ कर रहना होता है। आज भी समाज में स्त्री की स्थिति ज्यादा नहीं बदली है। गोविंदी अपने दांपत्य जीवन में किसी अन्य स्त्री के आ जाने से तनाव ग्रस्त हो जाती है इस स्थिति में उसके सामने उसकी जिम्मेवारियों को गिनाना एवं उसे उस परिवार को बांधे रखने का दबाव बनाने, उसको आदर्शवादी बने रहने का ज्ञान देना कहां तक उचित है? "नारी केवल माता है, और इसके उपरांत वह जो कुछ है वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है। एक शब्द में उसे लय कहूंगा जीवन का, व्यक्तित्व का और नारीत्व का भी।" घरेलू लड़ाई और मानसिक कष्ट इत्यादि को हम ईश्वर पर छोड़ देते हैं। हमें दूरदर्शी और आधुनिक होकर इन रूढ़ियों और अंधविश्वासों से मुक्त होना पड़ेगा। परंपराएं जब बोझ बन जाती है, उन्हें बदलना जरूरी हो जाता है।

प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में ऐसी अनेक स्त्रियों का जीवन दिखाया है जो पुरुषों द्वारा प्रताड़ित होती है। उसका जीवन एक अदृश्य गैस–चैंबर में घुट–घुट कर नष्ट होता रहता है। वह पुरुषों के लिए दिल बहलाने का एक खिलौना है। अपने जरूरत के अनुसार समाज इनका आदर्श निर्धारित करता है। पुरुषों ने स्त्री को मित्र रूप में भी स्वीकारा है लेकिन उसकी सीमाएं भी निर्धारित करते हैं। 'गोदान' में 'मालती' जैसे चरित्र के माध्यम से अपने समय में बदलती हुई पढ़ी–लिखी औरत की छवि प्रस्तुत किया गया है। मालती डॉक्टर है। उसे अपने काम के बदले पैसे मिलते हैं। यहां उसे तितली और मधुमक्खी का मिला–जुला रूप कहा गया है। आधुनिकता संकोच को दूर करती है। वह नीः संकोच होकर अलग–अलग पुरुषों से मिलती है। अपने इच्छानुसार उनसे व्यवहार करती है। उसकी नजर में सुख और आनंद पर केवल पुरुषों का ही अधिकार नहीं है। एक स्त्री को भी इसे प्राप्त करने की आजादी होनी चाहिए। इस तरह की आजादी की इच्छा और पहल कदमी करने वाली स्त्रियों को समाज हेय दृष्टि से देखता है और उस पर

 ISSN : 3049-3463 (Online)

कई प्रकार के इल्जाम लगाता है। चारित्रिक जीवन के नियम केवल स्त्री को मानने पड़ते हैं। पुरुषों को कोई चारित्रिक निर्मलता का प्रमाण नहीं देना पड़ता है। एक तरफ उसके सकल जीवन के लिए उसकी तारीफ होती है और दूसरी तरफ उसके संबंधों की सार्थकता के सवाल पर उसकी आलोचना भी की जाती है। प्रेमचंद बताने का प्रयास करते हैं कि विद्या और ज्ञान अर्जित करने से ही स्त्री शक्तिशाली बनेगी लेकिन उसे शक्ति अर्जित करके पुरुषों की तरह हिंसा, विध्वंस नहीं करना। उसे सृष्टि को बनाए रखना है क्योंकि प्रकृति ने उसे ही मनुष्यता को जन्म देने की नैसर्गिक शक्ति दी है। उनका कहना है कि स्त्रियों को अपना प्राकृतिक गुण को खत्म नहीं होने देना चाहिए। वे स्त्रियों को प्राणियों के विकास में पुरुषों से श्रेष्ठ मानते हैं। उन्हें लगता है कि अगर स्त्रियां अपने गुण को छोड़कर पुरुषों के गुण अपनाने लगे तो यह समाज के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। इसका एक उदाहरण यहां मिलता है– "अगर हमारी देवियां सृष्टि और पालन के देव मंदिर से हिंसा और कलह के दानव–क्षेत्र में आना चाहती हैं, तो उस समाज कल्याण न होगा। मैं इस विषय में दृढ़ हूं। पुरुष ने अपने अभियान में अपनी कीर्ति को अधिक महत्व दिया है।"[10] शायद इसलिए स्त्रियों को देवियों का स्वरूप मान रहे हैं और उन्हें पुरुषों से अधिक दयावान, त्यागवान और शक्तिशाली मान रहे हैं। "मैं उन लोगों में नहीं हूं जो कहते हैं स्त्री और पुरुष में शक्तियां समान है, समान प्रवृत्तियां हैं, और उनमें कोई भिन्नता नहीं है। इससे भयंकर असत्य की मैं कल्पना नहीं कर सकता। यह वह सत्य है, जो युग–युगांतरों से संचित अनुभव को उसी तरह ढक लेना चाहता है, जैसे बादल का एक टुकड़ा सूर्य को ढक लेता है।"[11] समाज को डर है कि यदि स्त्रियां पढ़–लिख जाती है, तो कहीं इसका गलत इस्तेमाल न करने लगे। कहीं वह भी पुरुषों की तरह ही हिंसात्मक और विध्वंसकारी न बन जाये।" अगर वही विद्या और वही शक्ति आप भी ले लेंगी, तो संसार मरुस्थल हो जाएगा। आपकी विधा और आपका अधिकार हिंसा और विध्वंस में नहीं, सृष्टि और पालन में है।"[12] इस प्रकार सामाजिक डर को दर्शाने का प्रयास किया गया है। जब समाज स्त्री को देवी कहकर थक जाता है तो उसे संस्कार की याद दिलाता है। भारतीय सभ्यता और संस्कार की याद दिलाता है। जैसे कि संस्कारों का आदर्श बनना केवल नारी धर्म है। पुरुष भी तो संस्कारों का आदर्श वन सकते हैं। यहां एक विरोधाभास का एहसास होता है। जैसे नारीयों का स्वतंत्र होने का सिर्फ दंड ही समाज झेल रहा हो। यहां गोविंदी के वक्तव्य ने पुरुष के सारे भ्रम और दर को तोड़ने का प्रयास किया है। विचार करने की बात यह है कि आखिर क्यों लगता है कि परिणाम हमेशा गलत ही होगा। और इसका जिम्मेवार या कारण कौन होगा? "पहली बात भूल जाइए कि नारी श्रेष्ठ है और सारी जिम्मेदारी उसी पर है, श्रेष्ठ पुरुष है और इस पर गृहस्ती का सारा भार है। नारी में सेवा और संयम और कर्तव्य सब कुछ वही पैदा करता है; अगर उसमें इन बातों का अभाव है तो नारी में भी अभाव रहेगा। नारियों में आज जो यह विद्रोह है, इसका कारण पुरुष का इन गुणों से शून्य हो जाना है।"[13] कुछ ही जगहों पर इस तरह के प्रसंग है अधिकांशतः पुरुष वर्चस्व एवं दलील ज्यादा दिखाई पड़ते हैं। यह उपन्यास जब लिखा गया था उसे समय लेखक आने वाले समय में जी ताकतवर आधुनिक स्त्री को देख रहे थे आज वह मौजूद है। परंतु इस ताकतवर स्त्री को समाज अपनाना नहीं चाहता है। मालती को अंत तक यह भ्रम रहता है कि मेहता उसे पसंद करता है। लेकिन मेहता की नजर में आदर्श नारी की कल्पना कुछ और ही है जिसके कारण वह मालती के प्रेम को समझ नहीं पता। "हमारी बहनें पश्चिम का आदर्श

 ISSN : 3049-3463 (Online)

ले रही हैं जहां नारी ने अपना पद खो दिया है और स्वामिनी से गिरकर विलास की वस्तु बन गई है। पश्चिम की स्त्री स्वच्छंद होना चाहती है, इसलिए कि वह अधिक से अधिक विलास कर सकें। हमारी माताओं का आदर्श कभी विलास नहीं रहा। उन्होंने केवल सेवा के अधिकार से सदैव गृहस्थी का संचालन किया है।"[14] स्त्री के प्रेम को अपनाने का सामर्थ्य आज भी समाज को नहीं है। या फिर यह भी कहा जा सकता है कि कोई चाहता ही नहीं की स्त्री प्रेम करे। यहां प्रेम जैसे मानवीय मुद्दे पर भी परंपरावादी रवैया दिखाई पड़ता है। "जिसे तुम प्रेम कहते हो, वह धोखा है, उद्दीप्त लालसा का विकृत रूप, इस तरह से जैसे सन्यास केवल भीख मांगने का संस्कृत रूप है। वह प्रेम अगर वैवाहिक जीवन में कम है तो मुक्त विलास में बिल्कुल नहीं है। सच्चा आनंद, सच्ची शांति केवल सेवा–व्रत में है। वही अधिकार का स्रोत है, वही शक्ति का उद्गम है।"[15] लेखक की नजर में सेवा ही बल्कि यूं कहे कि पुरुष सेवा ही नारी धर्म है। उन्हें स्त्रियों का यह दृष्टिकोण कतई स्वीकार नहीं कि वे किसी से प्रेम करें। इसका कारण यह दिखाई पड़ता है कि स्त्री प्रेम से कहीं ना कहीं पुरुषों का जीवन प्रभावित होता है। अन्यथा प्रेम स्त्री के लिए ही क्यों? पुरुष के लिए भी वर्जित होना चाहिए। परंतु पुरुष के लिए प्रेम करने की बंदिश कहीं भी नहीं लगाई जाती।

मालती अपने को प्रमाणित करने में असमर्थ होती है कि मेहता के लिए उसका प्रेम पवित्र है। और एक बार फिर नारी के मन को समझने की भूल कर उसके स्वाभिमान को आहत करने का दृश्य उदृत होता है। "यह झूठा आक्षेप है। तुमने सदैव मुझे परीक्षा की आंखों से देखा, कभी प्रेम की आंखों से नहीं। क्या तुम इतना भी नहीं जानते की नारी परीक्षा नहीं चाहती, प्रेम चाहती है। परीक्षा गुणों को अवगुण, सुंदर को असुंदर बनाने वाली चीज है। प्रेम अवगुणों को गुण बनता है, असुंदर को सुंदर। मैंने तुमसे प्रेम किया, मैं कल्पना ही नहीं कर सकती कि तुममें कोई बुराई भी है; मगर तुमने मेरी परीक्षा की और तुम मुझे अस्थिर, चंचल और जाने क्या–क्या समझ कर मुझसे दूर भागते रहे।" 16 आखिर मालती से ऐसी क्या गलती हुई कि उसका प्रेम और अस्वीकार किया गया? समाज के लिए नारी चरित्र का क्या पैमाना है? किस सांचे में वह उसे लाना चाहता है? दरअसल समाज स्त्री को मानवीय अधिकारों से वंचित रखना चाहता है। वह बी को वफा, त्याग, कुर्बानी जैसे रसायनों से मिलकर बनी कोई दिव्य प्रतिमा मानता है। उसकी निगाह में स्त्री शांतिप्रिय, धैर्यवान और सहनशील होती है। यहां पर प्रेमचंद एक विवादास्पद और कई बार दोहराया जाने वाला सूत्र देते हैं कि जब औरत पुरुष की तरह होना चाहती है, उसके गुणों को अपने जीवन में सम्मान देना चाहती है तो उसका पतन हो जाता है। यह तत्कालीन सोच आज भी पुरुष मानसिकता में मौजूद है। आज जरूरत है समाज को अपना नजरिया बदलने का और स्त्रियों को देखने और रखने के पैमाने को बदलकर उसे एक मनुष्य के रूप में स्वीकार करने का, तभी स्त्रियों का जीवन सुखमय हो सकता है।

निष्कर्ष: – इस उपन्यास में वैसे तो कई नारी पात्र है लेकिन कुछ नारी पात्र ऐसे हैं जो आज भी समाज में हर वर्ग में दिखाई पड़ते हैं। आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करती हुई 'मालती' है जिसे चरित्रवान होते हुए भी उसकी स्वतंत्र सोच एवं पवित्र प्रेम को ठुकराया जाता है। उसका जीवन जीने का जो ढंग है उसे नकारा जाता है। वहीं 'गोविंदी' है जो एक अदृश्य कैद से छूटने के लिए व्याकुल है। जिसका चरित्र समाज को तो स्वीकार्य है परंतु, उसे नारी चरित्र के पैमाने में जीना उसके लिए मुश्किल है। 'झुनिया' है जो बाल विधवा होने के बाद पुनः प्रेम करने की सजा भोगती है और समाज के द्वारा प्रताड़ित होती हुई

 ISSN : 3049-3463 (Online)

अनेक यातनाएं सहने को विवश हो जाती है। एक 'सिलिया' है जिसकी प्रकृति एक दबंग महिला की है फिर भी उसे प्रेम करने की सजा मिलती है क्योंकि वह दलित वर्ग की महिला है और उच्च वर्ग के पुरुष से प्रेम करती है।

इन सब के सहारे प्रेमचंद औरतों के कई समाज, कई वर्ग, कई चरित्र एवं कई व्यक्तित्व को प्रस्तावित करने का असरदार कोशिश करते हैं।

संदर्भ सूचीः–

1. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–01
2. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 21
3. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–118
4. आधुनिक गद्य के विविध रूप– संपादक रामदरश मिश्र, राजकमल प्रशासन, पृष्ठ संख्या– 90
5. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 245
6. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–246
7. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–193
8. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–194
9. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 196
10. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 156
11. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–157
12. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–159
13. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–162
14. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–160
15. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–161
16. गोदान– प्रेमचंद, साहित्य संसद, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–309

❐